ओ३म्

पूजनीया गुरु माँ सुश्री आचार्या प्रज्ञा देवी जी के प्रति–

मेरी आत्म-वाणी
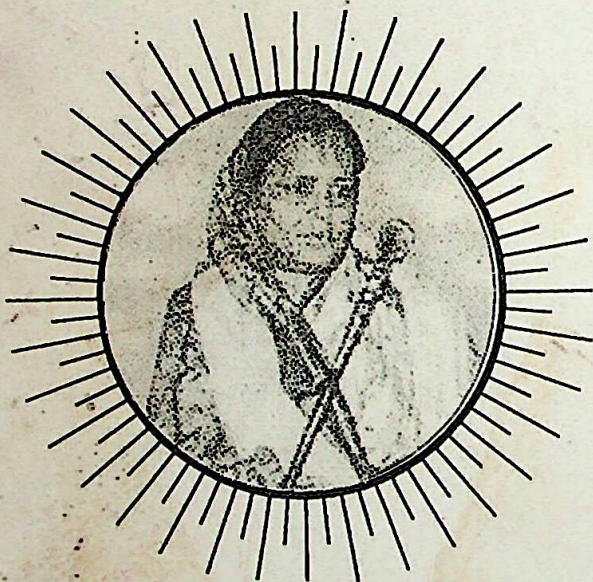
ओ! आर्यजगत् की ज्वलित ज्योति
तू कभी नहीं बुझने वाली
तुझसे जग मग इसका हर कण
तुझसे हम सब गौरव शाली

श्रद्धाभिभूता अल्पमति शिष्या–
अरुणा आर्या

ओ३म्

अनपजय्यमेवं यशो भवति य एवं विद्वान् सत्यं वदति।

(सत्यवादी का यश अजेय होता है)

(शतपथ ३।४।२।८)

सातवीं पुण्यतिथि पर

उन अप्रतिम यशस्विनी आचार्या जी के प्रति –

मेरी –
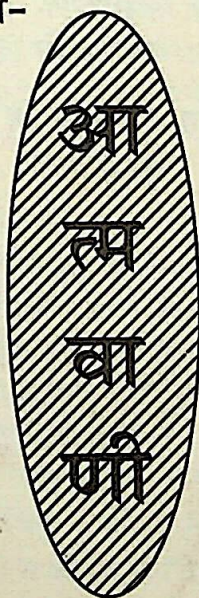
भावविह्वल शिष्या –

अरुणा आर्या

खरोरा, रायपुर (म० प्र०)

प्रकाशक–
पाणिनि कन्या महाविद्यालय
तुलसीपुर, वाराणसी–१० (उ० प्र०)
दूरभाषांक:–(०५४२) ३६०३४०

क्वचित् विद्वद्गोष्ठी क्वचिदपि सुरामत्त कलहः ।
क्वचित् वीणावादः क्वचिदपि हाहेति रुदितम् ।।
क्वचित् रम्या रागाः क्वचिदपि जराजर्जरतनुः ।
न जाने संसारः किममृतमयः किं विषमयः !!

प्रथम वार – १,००० मूल्य–
६ दिसम्बर, २००२

मुद्रक–
ज्योतिष प्रकाश प्रेस
कालभैरव, वाराणसी।

प्रकाशकीय

'शोकः श्लोकत्त्वमागतः' वचन महर्षि वाल्मीकि के लिये नितान्त सच था। इस समय प्रस्तुत 'मेरी-आत्मवाणी' इस अपनी लघु शब्दकृति में प्रिय अरुणा आर्या ने जिस प्रकार भाव को उँडेला है, प्रत्येक वाक्य से अपनी छलकती हुई श्रद्धा को सँवारा है उसे पढ़कर सचमुच यही लगता है कि 'भाव के भूखे हैं भगवान्!' जहाँ शब्द जञ्जाल नहीं उपाधियों के अम्बार की नहीं निर्मल भोले हृदय की आवश्यकता है, गहरी अनुभूति-तड़प-संवेदना की जरूरत है शब्द स्वतः चित्रित होते चले जायेंगे। इसे प्रमाणित कर दिया है इस श्रद्धाभिभूता सुश्री अरुणा आर्या ने जिसने इस पुस्तिका में अपना परिचय स्वयं भी दे दिया है, पाठक देखेंगे। बड़ी उम्र में मात्र ३ महीने का सान्निध्य प्राप्त कर इतनी सूक्ष्मता से उन गुणनिधाना पूजनीया बहिन जी के एक से एक अप्रतिम गुणों को सामने रखना, मात्र आठवीं कक्षा तक पढ़ी हुई ग्राम्य बाला के लिये आश्चर्यजनक ही कहा जायेगा।

इस श्रद्धा कुसुम को सजाते हुए, सम्पादन करते हुए कई बार इस पुत्री अरुणा के शब्दों ने मुझे रोमाञ्चित कर दिया। मैंने इसकी निःसृत वाणी को यथावत् ही देने का पूर्ण प्रयास किया है। बहुत अच्छा लगा जहाँ इसने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली से भी अपील कर दी है कि आर्य जगत् के सैकड़ों वर्षों के इतिहास में ऐसी अनन्य विदुषी जिसकी वाणी-लेखनी-संस्था सञ्चालन सबमें अद्वितीय समान अधिकार प्राप्त रहा हो उनकी पुण्यतिथि ६ दिसम्बर को 'प्रज्ञा-दिवस' के रूप में मनाया जाये।

कनकभूषणसंग्रहणोचितो यदि मणिस्त्रपुण्यभिधीयते।
न स विरौति न चापि स शोभते भवति योजयितुर्वचनीयता।।

अर्थात्-यदि हम मणि को स्वर्णमण्डित न करें तो ये हमारी ही न्यूनता होगी। मानापमान से विमुख ऐसे जन सदा एक रस रहेंगे उन्हें प्रशस्ति-पत्र की आवश्यकता नहीं किन्तु उनके कार्य हमारे लिये वैसे ही पथप्रदर्शक हैं जैसे रेगिस्तान में भटके हुए राही को रेत पर बने हुए किसी के पैर के निशान रास्ता

दिखा देते हैं। उनकी यशोगाथा का गान हमें उर्जित करेगा इसमें सन्देह नहीं। ऐसे ही प्रयास यशस्वी जनों को चिरजीवित रख सकते हैं।

मैं सुपुत्री अरुणा आर्या को बहुत मंगलमय साधुवाद देती हूँ कि अपनी निश्छल निष्ठा भावना से इसने जो भजन किया है–वह अनकों भक्त हृदयों से यह कहला देगी कि हाँ! हम भी ऐसा ही सोचते थे पर अभिव्यक्त नहीं कर पाते थे! या वे ऐसी थीं? हम आज जान सके!

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः ।
करणं परोपकरणं येषां, केषां न ते वन्द्याः ?

मंगलाभिलाषिणी–
मेधा देवी
प्राचार्या, पाणिनि कन्या महाविद्यालय
तुलसीपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
दूरभाषांक–(०५४२) ३६०३४० पिन – २२१०१०
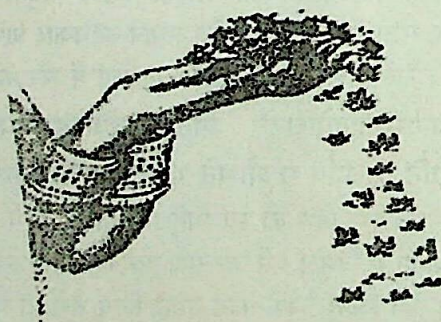
दो शब्द

मैं अरुणा आर्या खरोरा ग्राम में ८वीं क्लास तक पढ़ी, पूज्या आचार्या जी की शरण में २९ वर्ष की उम्र में आई, तीन माह रहकर ज्ञान प्राप्त किया। इस पुस्तक को लिखने की शक्ति उस परमपिता परमात्मा की प्रेरणा से मिली। पू० आचार्या जी के प्रति उस प्रभु ने मेरे दिल में जो आत्मभाव भरे हैं, उसी को मैं लेखनी बद्ध करने में कामयाब हुई। आप आर्यसज्जनों से यही विनती है कि यह पुस्तक आपके हाथ में है। त्रुटियों का ध्यान न देते हुये उस महान् विदुषी आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी को अपने हृदय से श्रद्धाञ्जलि दें।

प्रभु से प्रार्थना–

हे सकल सृष्टि के रचयिता! आपने इस संसाररूपी गर्भ में हम मनुष्यों को भेजा है, जहाँ असंख्य प्राणी निवास कर रहे हैं। हे दुःखहर्त्ता! आपने इस मनुष्य शरीर में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार भी डाले हैं। प्रभु! इसमें इतनी तो शक्ति नहीं जितनी कि आपमें है, आपकी प्रबल शक्ति के सामने इसकी शक्ति कमजोर पड़ जाती है। हे ईश्वर! हम मनुष्यों को इन्हीं बुराइयों से बचाइये और हमें अच्छे पदार्थ देकर प्रकाश की ओर ले चलिये ताकि हम अपने जीवन को सफल बना सकें और आपके लोक में जायें तो इन होठों में आपका नाम लेकर जायें ताकि आप हमें अपने समीप बिठाकर स्नेह करें।

हे विश्वपति! आपने उस महान् विभूति डॉ० प्रज्ञा देवी जी के प्रति मेरे मन में जो भाव डाले, उसी को मैंने लेखनीबद्ध किया है। हे प्रभु! आपसे हाथ जोड़कर यही विनती है कि ऐसी महान् आत्माओं के प्रति मेरे हृदय में सम्मानित भावों को भरिये, ताकि आपके भेजे इन विद्वान् सज्जनों का सम्मान कर सकूँ।

आपके चरणों में समर्पित–

अरुणा आर्या
देना बैंक के पास, मु०पो० खरोरा
जिला रायपुर (छत्तीसगढ़)

६ दिसम्बर, २००२
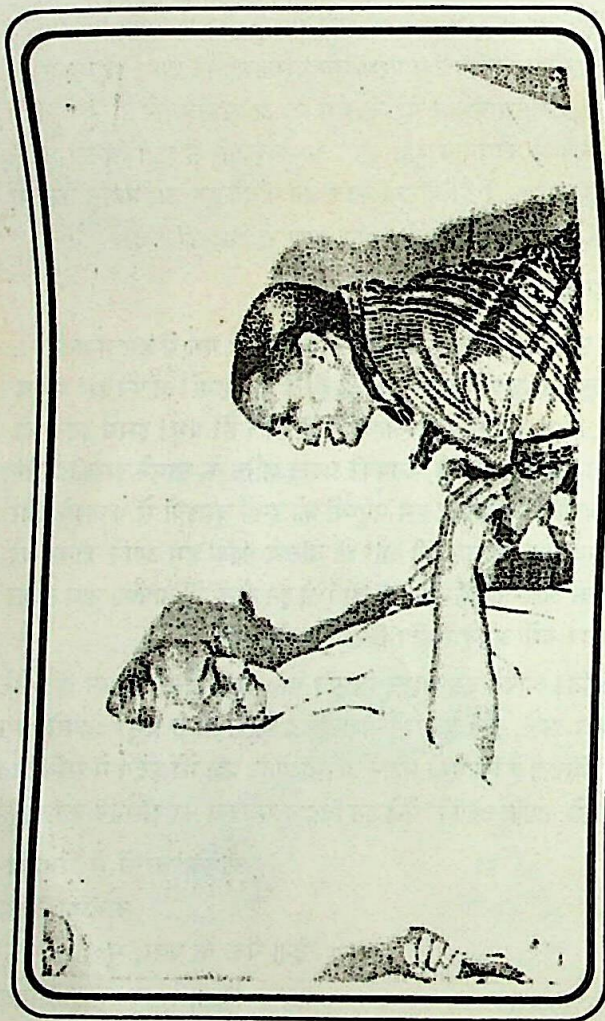
आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई में पूज्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी को पुरस्कार प्राप्ति के बाद उन्हें बधाई देते हुए श्रीमती लज्जारानी गोयल मुम्बई
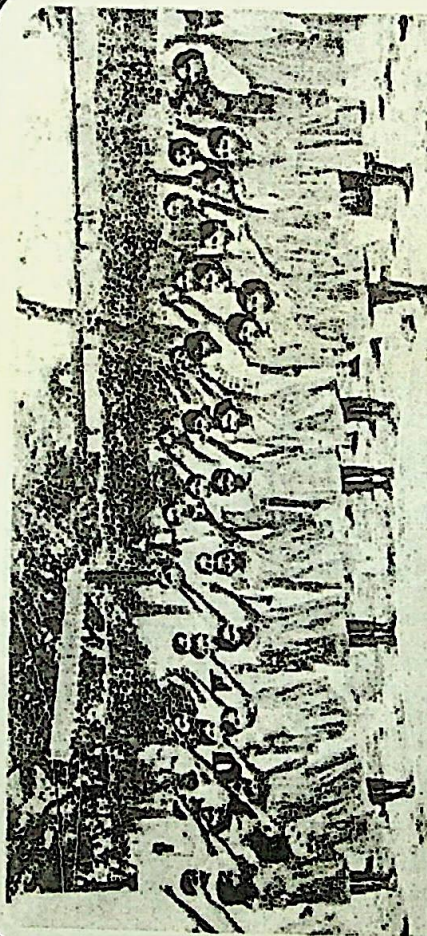
पाणिनि कन्या महाविद्यालयीय कन्यायें ध्वजगान करती हुईं
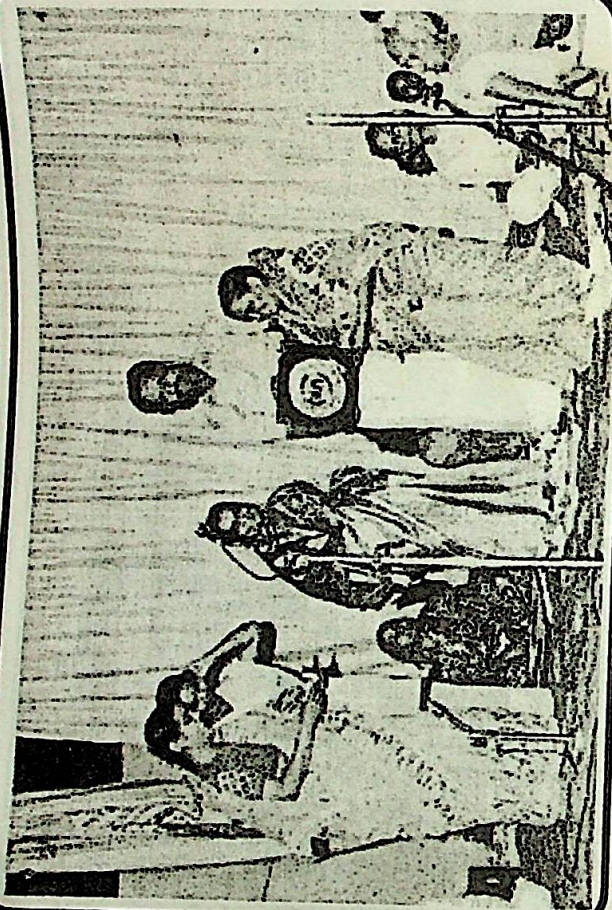
सन् १९९० के वार्षिकोत्सव पर आर्य भाई-बहिन पूज्या बहिन जी का सम्मान करते हुए

महान् प्रभु-भक्त डॉ० प्रज्ञा देवी जी

अच्छे कर्म करने के लिये मनुष्य को अपने संस्कारों को बहुत पवित्र करना पड़ता है तब कहीं जाकर मनुष्य सत्य के पथ पर चलता है और अपने उस अच्छे कर्म से वह परमात्मा को प्राप्त करता है। कई ज्ञानी तो ऐसे हुये हैं जिन्होंने ईश्वर की भक्ति को वाणी के द्वारा व्यक्त कर, दुनियाँ के सामने अपने भक्त होने का वे प्रमाण देते आये हैं पर 'पूज्या आचार्या प्रज्ञा देवी जी' ने ईश्वर की भक्ति को कर्म के द्वारा प्रमाणित किया। आज इतना बड़ा गुरुकुल खोलना तथा संसारी थपेड़ों से निपटते हुये धैर्य को बिना खोये जिस मुकाम पर वे पहुँची तथा जितने भी उन्होंने कार्य किये उसके पीछे उस ईश्वर का आशीर्वाद हमेशा उनके साथ था, क्योंकि वे एक अच्छी समाज-सेविका तो थीं ही, साथ ही एक महान् ईश्वरभक्त भी थीं।

इस संसार में तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक गुलाब के पौधे के समान- जो खिलता है, फलता नहीं (कहते हैं पर करते नहीं)। दूसरा आम के वृक्ष के समान- फूलता है और फलता भी है (कहते हैं और करते भी हैं)। तीसरा कटहल के पेड़ के समान- जो केवल फलता है (कर्म करते हैं)। पूज्या आचार्या जी आर्यजगत् के आसमान में एक खूबसूरत तारे के समान थीं, जिसके प्रकाश से न केवल पाणिनि कन्या महाविद्यालय ही, अपितु पूरा आर्यजगत् जगमगा रहा है। जिन्होंने एक संन्यासी जैसा जीवन व्यतीत कर अपने जीवन को ऊँचा उठाया, दूसरे के जीवन को भी अपने जैसा बनाया। ऐसे महान् गुण प्रभु-भक्त में ही पाये जाते हैं। ऋग्वेद का यह मन्त्र पूज्या आचार्या जी के स्वभाव को प्रमाणित करता है-

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः।
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमं रयिं दाः।।

(ऋ० ५।२४।१।।)

पूज्या आचार्या जी का जीवन ज्ञान और सदाचार रूपी प्रकाश से प्रकाशित रहा है। आचार्या जी सदैव परमात्मा के गुणों को अपने जीवन में अपनाकर सर्वदा अध्यात्म-पथ पर आगे बढ़ती रही थीं। प्रभु के दिव्य रूप को समझकर, अपने हृदय-मन्दिर में और इस प्रकृति में परमात्मा को देखा करती थीं। उनकी कार्यप्रणाली को देखकर मैं तो कभी-कभी सोच में पड़ जाती थी कि पूज्या गुरुमाता भगवान् से आज्ञा ले-लेकर कार्य करती हैं क्या? मुझे तो ऐसा ही महसूस होता था।

मनुष्य को मानव-तन मिला है प्रभु-भक्ति के लिए। इसका असली प्रयोजन यही है—संसार-सागर से पार उतरना। इस संसार में कई भक्त हुये हैं जिन्होंने संसार को छोड़कर, वन में रहकर, फल-पत्ते खाकर, तप, साधना योग का अनुष्ठान कर उस परमात्मा को जाना और पाया। दूसरे ऐसे भी भक्त हुये हैं जिन्होंने संसार में विचरण कर, प्रभु का नाम लेकर अपने जीवन को धन्य बनाया है। तीसरे ऐसे भक्त हुये जो गृहस्थरूपी संसार में रहकर भी तप-साधना में लगे रहे और अपने जीवन को ध्येय में लगाकर उस परमात्मा को प्राप्त किया। उस परमात्मा को प्राप्त करने के लिये उसी ईश्वर की कृपा का होना जरूरी है तभी हम उस प्रभु को पा सकेंगे।

जिस तरह असाधारण मानव मोह-माया के जाल में फँसकर भी परमात्मा को नहीं भूल सकता, उसी तरह महान् प्रभु-भक्त डॉ० प्रज्ञा देवी जी को कोई कैसे भूल सकता है? और भूलेगा भी क्यों? क्योंकि उन्होंने ईश्वर के बनाये धर्म को अपने जीवन में उतारा जो था। कोई भूलना भी चाहे तो उनकी छवि जीवन के उस मोड़ पर आकर खड़ी हो जाती है जैसे कि हमको वे सचेत कर रही हों।

ममतामयी माँ आचार्या प्रज्ञा देवी जी

'माँ' शब्द सुनने और बोलने में कितने आनन्द की अनुभूति होती है, वह तो एक माँ या वह बच्चा ही समझ सकता है। ईश्वर के बाद यदि किसी का स्थान है तो वह माँ का है। एक नारी जब माँ बनती है और अपने हृदय की ममता व स्नेहरूपी अमृत का बच्चे को पान कराती है तो उस वक्त माँ आनन्द में डूब जाती है।

ऐसी एक आर्यजगत् की ममतामयी माँ विदुषी प्रज्ञा देवी जी का जन्म ५ मार्च १९३७ को मध्य-प्रदेश सतना जिले में हुआ तथा पठन-पाठन वाराणसी में हुआ। मेरी ममतामयी माँ देवकी तो नहीं थीं, हाँ यशोदा बनकर कितनी ही देविकों की बेटियों को अपनी ममता और स्नेहरूपी ज्ञानामृत पिलाकर ऐसे फलदार वृक्ष तैयार किये जिसकी छाँव में सज्जन तो क्या दुर्जन भी बैठकर आत्मिक शान्ति का अनुभव करता है।

बच्चे को जन्म देनेवाली माँ हजारों की भीड़ में अपने बच्चे को दुलार करते वक्त संकोच नहीं करती, पर मेरी गुरुमाता प्रज्ञा देवी जी ऐसी त्यागशीला माँ थीं जो अनुशासन, मर्यादा में बँधकर अपने गुरुकुल की बच्चियों को अच्छे संस्कारों से सुसज्जित करने के लिये अपने हृदय के स्नेह को ज्ञानरूपी अमृत पिलाकर प्रकट किया करती थीं। गुरु तो थीं ही पर समय-समय पर मेरी गुरु प्रज्ञा माँ सखी बहन का रिश्ता निभाती थीं।

मेरी गुरु माँ का स्नेह चेतन जीवों के ऊपर जितना था उतना ही जड़ चीजों के प्रति भी उनका स्नेह छलकता था। पाणिनि कन्या महाविद्यालय का वह बगीचा भी उनके आने की राह देखता रहता था कि कब मेरी ममतामयी माँ अपने स्नेहरूपी हाथों से हमें स्पर्श करेगी।

विद्यालय की भूमि भी अपनी ममतामयी माँ के चरणों को अपने मस्तक पर पड़ते देखकर ऐसा महसूस करती थी कि मैं धरती होकर भी

कितनी भाग्यशाली हूँ कि इस पुण्यशाली आत्मा के चरण मेरे मस्तक पर पड़ रहे हैं।

मेरी गुरु माँ ऐसी महान् विदुषी थीं कि उनके कर्म से सदाचार, स्नेह, ममता, मर्यादा इत्यादि गुण ऐसे टपकते थे कि देखते ही बनता था।

मेरी ममतामयी माँ! आप हम सब बच्चियों के नजरों से ओझल होकर और पास आ गईं। हमारे नयनों में, बुद्धि में, दिल में आप बसी हैं। ये हाथ, मस्तक आपके चरणरज से धन्य हो गये हैं। आप जैसी ममतामयी गुरु माँ को पाकर इस जीवन में किस चीज की चाह रह जाती है? आप इतनी महान् थीं कि आपको देखकर ऐसा सोचती थी कि अपना यह जीवन तेरे अर्पण कर दूँ।

आप जैसी महान् आत्माओं का जन्म इस भारत भूमि में परोपकार करने के लिये होता है। आप जैसी महान् विभूतियों के कारण ही भारत का सर आज भी गर्व से ऊँचा है। इसीलिए तो आज भी हम बड़े गर्व से कहते हैं मेरा भारत महान् है और आप जैसी सदाचारिणी ममतामयी भारतीय वेदवेत्री गुरु माँ के कारण ही आर्यसमाज का भी मस्तक गर्वोन्नत है।

✡
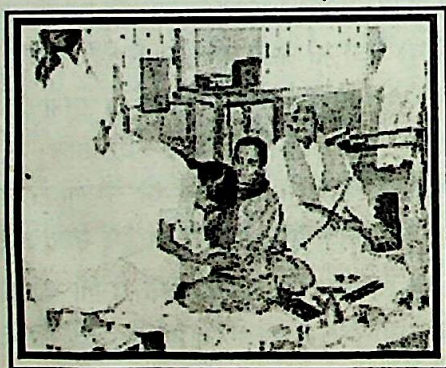
कन्याओं के उपनयन संस्कार के पश्चात् उन्हें आशीर्वाद देती हुई पूज्या आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी

एक शिष्या की आर्त्तपुकार–

गुरु माँ प्रज्ञा देवी जी को

मैं अरुणा छत्तीसगढ़ खरोरा ग्राम में जन्मी ८वीं क्लास तक पढ़ी हुई, आर्य संस्कारों से जुड़ी हुई, एक कमजोर बुद्धि की लड़की ने जब आपके विषय में दूसरे विद्वानों से सुना तभी से आपके दर्शन के लिये मन में लालसा लिये प्रभु से प्रार्थना करती थी किं कब उस महान् विदुषी प्रज्ञा जी का दर्शन होगा। प्रभु के आशीर्वाद से सन् १९९३ में डॉ० देवसिंह के घर यजुर्वेद पारायण यज्ञ कराने हमारे गांव खरोरा पधारीं। आपके दर्शन क्या हुये मेरा चित्त आपके प्रति आर्द्र हो गया। मेरे आग्रह और विनय करने से आपने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर विद्यालय में तीन माह रहने की अनुमति दे दी। २९ वर्ष की बड़ी उम्रवाली लड़की को कैसे व्यवहार की शिक्षा देनी चाहिये यह सब आपके सदाचार रूपी कर्म से ज्ञात हुआ।

अपने विद्यालय में जिस तरह से आपने मुझे रखा, उससे मुझे बहुत अनुभव ज्ञान मिला। मैं तो एक बिना माँ की लड़की थी। आप मेरी गुरु तो थीं ही, पर एक बहन, सखी का रिश्ता भी आपने मेरे साथ निभाया।

मेरी गुरु माँ! आपके सदाचार चरित्र को देखने से इतना ज्ञान तो हुआ कि मनुष्य को अपने आपको ऐसा बनाकर रखना चाहिए जिससे उस स्थान में रहने वाले लोगों के ऊपर गलत प्रभाव न पड़े। एक ब्रह्मचारिणी को अपनी ममता और स्नेह को हृदय में दबाकर कैसे दूसरों के ऊपर अपने आपको न्यौछावर कर उसको सही रास्ते में लाना चाहिये ये तो आपके सुन्दर चरित्र से शिक्षा मिली।

मेरी गुरु माँ! आप मुझे छोड़कर क्यों चली गईं? बताना क्या अपराध हुआ है हमसे कि आप इतनी दूर चली गयीं कि ये आँखें आपको देख नहीं सकतीं। कोई बात नहीं अगर दिल में श्रद्धा की भावना हो तो दूर की चीज भी पास नजर आती है आप हमारे बहुत करीब हैं। आप तो दूर रहकर भी मेरे भले की बातें सोचती हैं। इसीलिए तो ऋग्वेद का यह मन्त्र आपकी ओर दर्शाता है–

एतेनाग्ने ब्रह्मणा वावृधस्व शक्ती वायत् ते चकृमा विदा वा ।
उत प्रणेष्यभि वस्यो अस्मान् त्सं नःसृज सुमत्या वाजवत्या ।।
(ऋ० १।३१।१८।)

जो मनुष्य वेदरीति से धर्मयुक्त व्यवहार को करते हैं वे ज्ञानवान् और श्रेष्ठमति वाले होकर उत्तम विद्वान् की सेवा करते हैं वह उनको श्रेष्ठ, सामर्थ्य और उत्तम विद्यायुक्त करता है।

गुरु माँ! आप मुझसे कहती थीं कि अरुणा तुमने मुझे जाना नहीं है। सच में– एक अज्ञानी इन्सान आपको कैसे जान सकता है? टिमटिमाने वाला जुगनू भला सूर्य के प्रभाव को क्या जाने? पर माँ! मैं टिमटिमाने वाला जुगनू हूँ तो एक बुद्धिजीवी इन्सान भी हूँ। मैं आपको पूरी तरह पहचान गयी हूँ। किसी सन्त ने एक बार कहा था मुझसे कि तुम पूर्वजन्म की सन्त हो, पर तुममें सन्त का गुण कम है। कम ही सही, मेरी आत्मा सन्त की है इसीलिए आप जैसी वेदवेत्ता महान् विभूति के दर्शन करने का मुझे सौभाग्य मिला। कहते हैं वर्षा ऋतु में झंडी होता है (धीरे-धीरे पानी गिरने को झंडी कहते हैं) झंडी का पानी धीरे-धीरे धरती में घुसता है। मूसलाधार वर्षा होने से पानी का बहाव अधिक रहता है इसीलिए धरती पानी कम पीती है।

मेरी विदुषी माँ! 'सत्य' झंडी के पानी की तरह बुद्धि और दिल में धीरे-धीरे प्रभाव करता है। दिखावेपन में लोग जल्दी आकर्षित होते हैं पर प्रभाव मूसलाधार वर्षा की तरह होता है। इसीलिए सत्यशील, सत्यवादी, प्रभुभक्त को पहचानना बहुत कठिन होता है। बस माँ, मैंने आपको पहचानने में गलती की, जिसका दुःख मुझे आज तक है।

माँ!

जैसे उस निराकार प्रभु को भक्त वेदमन्त्रों के द्वारा पुकार रहा है–

किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत् स्तोतारं जिघांससि सखायम् ।
प्र तन्मे वोचो दूळभ स्वधावोऽव त्वानेना नमसा तुर इयाम् ।।

(ऋ० ७।८६।४।)

माँ! मैं भी उस निराकार परमात्मा को नहीं जानती, पर मैंने ग्रन्थों में पढ़ा है कि वेद के अनुसार जीवन जीने वाला भगवान् का रूप होता है अतः वैसे ही मैं भी आपको वेदमन्त्र के द्वारा पुकार रही हूँ।

सं पूषन्नध्वनस्तिर व्यंहो विमुचो नपात् ।
सक्ष्वा देव प्र णस्पुरः ।। (ऋ० १।४२।१।)

मेरी पुकार सुन रही हो न माँ! बता न कौन सा अपराध हो गया है जिससे मेरी आँखों से ओझल हो गई हो? इस अरुणा को कहा करती थी–अरुणा ये समझो कि तुम "विद्यालय में जन्मी हो"। इतना बड़ा शब्द एक माँ की ममता ही बोलती है। अरुणा को नया जीवन देने वाली माँ! किस स्थान में जाकर छुप गयी हो? मेरी सद्गुणी माँ! अगर मेरे से अपराध हुआ है तो मुझे क्षमा कर दे और अपनी अरुणा को दर्शन दे। सुन रही हो न माँ मेरा करुण क्रन्दन!! मेरी आत्मा यह महसूस

करती है कि आप मेरे समीप हैं। मैं आपको इन नेत्रों से तो नहीं देख सकती पर मेरे पास एक और आँख है वह है श्रद्धा की, प्रेम की, जो दिल में है जिससे मैं आपको देखती हूँ, महसूस करती हूँ। आपने अपने को इतना अच्छा बनाया कि आपको देखते ही हृदय में प्यार उमड़-उमड़ पड़ता है। अपने आपको आपने इतना सद्गुणी बनाया कि आपके गुणों को देखते ही ऐसा लगता है जैसे अपना सर्वस्व अर्पण कर दूँ। मेरी माँऽऽऽ ! मेरे पास स्नेह श्रद्धा का धन है। किसी की दौलत में भी इतनी ताकत नहीं कि इस धन को अपनी दौलत से खरीद सके। हाँ! दौलत से चापलूसी भरा स्नेह जरूर खरीद सकते हैं पर माँ के ममता भरे स्नेह को नहीं। न तो मेरे पास दौलत है कि आपको मैं अपने सामने झुका सकूँ, न मैं इतनी बड़ी ज्ञानी हूँ कि आपको अपने ज्ञान के सामने झुका सकूँ। मेरी वेदवेत्री माँ! आपकी यह निर्धन शिष्या अपनी श्रद्धा स्नेह की दौलत आपको अर्पण करती है।

उप मा मतिरस्थित वाश्रा पुत्रमिव प्रियम् ।
कुवित् सोमस्यापामिति ।। (ऋ० १०।११९।४।।)

किसी की चार दिन की जिन्दगी सौ काम करती है ।
किसी की सौ बरस की जिन्दगी से कुछ नहीं होता ।।

गुरु माँ प्रज्ञा देवी जी

विप्रा मन्त्रविदो युक्तास्तैर्याः प्रोक्तास्तथाऽऽशिषः ।
ता निष्फला भविष्यन्ति न कदाचिदपि स्फुटम् ।।
(भागवतपुराण १० स्कन्ध। अ० ७। श्लोक १७।)

यह बात स्पष्ट है कि जो वेदवेत्ता और सदाचारी ब्राह्मण होता है उनका आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं होता।

मनुष्य के लिये परमात्मा ने यह सृष्टि बनायी तो सृष्टि के साथ मनुष्य के लिये धर्मरूपी अनुशासन भी बनाया ताकि मनुष्य अपनी मर्यादा में रहकर अच्छे कर्म कर सके। धर्म को अपने जीवन में ढालकर मनुष्य सदाचारी बन सकता है। एक धर्म ही ऐसा है जो मनुष्य को पाप के रास्ते से और बुरे विचारों से बचाता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी ने वेद के अनुसार अपने चरित्र को ढाला था। इसी सदाचार को अपनाकर रावण का वध किया था। सदाचार से ही मनुष्य काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंरूपी रावण को मार सकता है। सदाचार मनुष्य का ऐसा गहना है कि जो भी इस गहने को पहनता है वह दूसरों की नजरों में और ईश्वर की नजरों में सम्माननीय व्यक्ति बन जाता है।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी एक महान् विदुषी महिला थीं। जिनके शब्दों में, खान-पान में, पहनावे में सदाचार ही टपकता था। सदाचार से ही पूज्या आचार्या जी ने अपने संस्कारों को पवित्र किया तभी तो उनका कर्म इतना महान् था। ''वास्तव में कर्म तो वही है जिससे ईश्वर को प्रसन्न किया जा सके और विद्या भी वही है जिससे भगवान् में चित्त लगे''। पूज्या आचार्या जी का

ज्ञान सदा भगवान् के चिन्तन में लगा रहता था। उनका जीवन सादगीपूर्ण था, जिस कार्य को करना है उसी के बारे में सोचती थीं इस बीच दूसरे विषय को पास नहीं फटकने देती थीं।

सदाचार को जीवन में लाने के लिये अपने को कठोर बनाना पड़ता है। कठोर इसलिये कि बुरे विचार हमारे अन्दर प्रवेश न कर जायें, न कि दूसरे प्राणी के साथ कठोर व्यवहार करें। पूज्या आचार्या जी सदाचार-व्यक्तित्व की मालकिन थीं उनको देखते ही मन में प्यार, ममता, स्नेह अपने आप हृदय से फूट पड़ता था और ऐसा महसूस होता था कि अपना जीवन उनके अर्पण कर दूँ। सदाचार ऐसा गहना है कि मनुष्य के व्यक्तित्व को झलका देता है। पूज्या आचार्या जी ऐसी सदाचारिणी विदुषी थीं कि उनका कहा हुआ एक भी शब्द कभी निष्फल नहीं जाता था।

जब मनुष्य सदाचार को अपनाता है, ईश्वर के आशीर्वाद का पात्र बन जाता है। पूज्या बहिन जी के सदाचार को देखने से हमें ज्ञात हुआ कि उनके ऊपर ईश्वर का आशीर्वाद सर्वदा था।

✡

"चरित्र वह जलधारा है जो व्यक्तित्त्व के मार्ग से निकल कर पृथ्वी पर फैली क्यारियों को सींचती हुई विश्व के विशाल सागर में लुप्त हो जाती है।"

गुरु माँ प्रज्ञा देवी जी

उद्धेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम् ।
अस्तारमेषि सूर्य ।। (ऋ० ८।९३।१।)

भावार्थः– हे सकल संसार को देदीप्यमान करने वाले परमेश्वर! तू निश्चय से उस मनुष्य के हृदय में प्रकाशित होता है जो धन होने पर उसे दीन दुःखियों में वितरित करता है, जो ज्ञान और भक्तिरस की धाराओं की वृष्टि करता है, जो मनुष्य हितकारी, परोपकारी आदि कार्य करता है और जो काम, क्रोध आदि शत्रुओं को परे भगा देता है।

मनुष्य अगर चाहता है कि हर क्षण ईश्वर नजर आये, मनुष्य चाहता है कि भौतिक सुख, आत्मिक सुख मिले तो कुछ पवित्र गुणों को अपने जीवन में धारण करना पड़ेगा।

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु ।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेय एवाचरेत् सदा ।।
(भागवत पुराण–१० स्कन्ध। अ०२२।३५)

संसार में प्राणी तो बहुत हैं, परन्तु उनके जीवन की सफलता इतने में ही है कि जहाँ तक हो सके अपने धन से, विवेक–विचार से, वाणी से और प्राणों से भी ऐसे कर्म किये जायें जिससे दूसरों की भलाई हो।

ऐसी ही 'पाणिनि कन्या महाविद्यालय' की प्राचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी थीं जिनके ओजस्वी विचारों और हृदय को छू लेने वाले उद्गारों से डाकू सुदामा, भक्त सुदामा बन गया।

दूसरी घटना मेरे स्वयं के जीवन की–

मैंने (अरुणा ने) विद्वानों के मुख से पूज्या आचार्या प्रज्ञा देवी जी के बारे में सुना था, यहीं से हृदय में दर्शन करने की लालसा बनी। मैं इन्तजार किया करती थी कि कब उस विभूति के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इन्तजार की घड़ी समाप्त हुई और सन् १९९३, २६ फरवरी को ५ दिवसीय यजुर्वेद पारायण यज्ञ कराने आप डॉ० देवसिंह वर्मा के यहाँ हमारे गांव खरोरा पधारीं। समय १।। बजे का था। मैं अपने घर में भरी थाली भोजन की लिये बैठी ही थी कि अचानक मल्लुराम जी ग्राम लवण निवासी ने खबर दी कि अरुणा जी! "प्रज्ञा देवी जी" आ गयीं। मैंने झट से कहा– वही प्रज्ञा देवी हैं बनारस वाली, जो आर्यजगत् के सर का ताज बन गयी हैं! उसने कहा– 'हाँ' वही हैं। मैं भोजन की भरी थाली वहीं पर छोड़ झट से देवसिंह के घर भागी–भागी गई। वहाँ जाकर देखती हूँ कि पूज्या बहिन जी भोजन कर रही हैं। मल्लुराम जी ने पूज्या बहिन जी से कहा कि अरुणा जी भोजन की थाली छोड़कर आपके दर्शन के लिये आयी हैं। पू० बहिन जी जल्दी से उठीं। मैंने उनकी तरफ बढ़कर हाथ में दक्षिणा देकर चरण छुये। उस समय ऐसा लगा जैसे मेरी इन्द्रियां थम सी गईं, मेरे दिल की धड़कन स्थिर हो गई और मैं (अरुणा) पूज्या बहिन जी को ऐसे देखने लगी कि देखती ही रह गई। फिर वह समय भी आया जब यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद पू० बहिन जी का प्रस्थान बनारस की ओर हुआ। पू० बहिन जी के जाने के बाद ही मुझे महसूस हुआ कि मैं उनको श्रद्धेय मानने लगी हूँ। बस फिर क्या था मेरी आँखों में उनकी छवि समा गई और उनकी याद में आँसू बहाते हुए पूरे एक साल बाद मैं पढ़ने वाराणसी गई जहाँ पू० बहिन जी से मुझे अनुभव ज्ञान मिला और तीन माह उनके चरणों को स्पर्श करने का सौभाग्य मिला। आज मेरे जीवन में बदलाव है; जो पू० आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी की ही देन है।

हम छत्तीसगढ़ निवासियों का स्वभाव सरल, दिल में श्रद्धा और भोलापन है। शायद इसी स्वभाव को देखकर आर्यसमाज के प्रचण्ड विद्वान् परम पू० गुरुदेव स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी छत्तीसगढ़ में आर्यसमाज का झण्डा फहराने में कामयाब हुये। स्वामी दिव्यानन्द जी की ही यह देन है कि जिनके परोपकार से हम छत्तीसगढ़ के आर्यसमाजी पू० प्रज्ञा देवी जैसी आर्यजगत् की विभूषित नारी के दर्शन और सत्संग का लाभ उठा सके। अन्त में ऋग्वेद का यह मन्त्र–

ते अस्मभ्यं शर्म यंसन्नमृता मर्त्येभ्यः ।
बाधमाना अप द्विषः ।। (ऋ० १।९०।३।)

मनुष्यों को चाहिये कि वे विद्वानों से शिक्षा पाकर खोटे स्वभाव वालों को दूर कर आनन्दित रहें।।

✡

कदम चूम लेती है खुद आके मंजिल ।
अगर चलने हारा खुद हिम्मत न हारे ।।

आचार्या गुरु माँ प्रज्ञा देवी जी

तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्।
अर्यमणं वरुणं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्।।
(ऋ० १।८९।३।)

किन्हीं वेदोक्त लक्षणों के बिना विद्वान् और मूर्खों के लक्षण नहीं जाने जा सकते और न उनके बिना विद्या और श्रेष्ठ शिक्षा से सिद्ध की हुई वाणी सुख करने वाली हो सकती है, इससे सब मनुष्य वेदार्थ के विशेष ज्ञान से विद्वान् और मूर्खों के लक्षण जानकर विद्वानों का संग कर, मूर्खों का संग छोड़कर समस्त विद्या वाले हों।

'पाणिनि कन्या महाविद्यालय' की प्राचार्या स्व० डॉ० प्रज्ञा देवी जी ने वेदों के तात्पर्य को जानने वाले विद्वानों के कितने रूप होते हैं, यह अपने स्वरूप से प्रकट कर दिया था। पूज्या बहिन जी जिस काम में हाथ डालती थी उस काम में समय को व्यर्थ नहीं जाने देती थीं। यही कारण है कि उन्हें हर काम में सफलता मिली। अपनी कम उम्र में उन्होंने जितने बड़े-बड़े कार्य किये हैं, उसके पीछे समय को व्यर्थ न खोना उनके चरित्र को दर्शाता है। ऋग्वेद का यह मन्त्र–

त्वं त्येभिरा गहि वाजेभिर्दुहितर्दिवः।
अस्मे रयिं निधारय। (ऋ० १।३०।२२।)

जो मनुष्य कुछ भी काल व्यर्थ नहीं खोते, उनका सब काल कामों की सिद्धि करने वाला होता है।

पूज्या आचार्या जी के चरित्र को देखने से ऐसा ज्ञात होता था कि पू० बहिन जी ने ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुये, अच्छे विद्वानों का संग

कर, अपने संस्कारों और विचारों को पवित्र कर उत्तम-उत्तम काम किये हैं क्योंकि जिस मनुष्य की संगति महान् लोगों के साथ हो उसका बड़ा से बड़ा कार्य पूर्ण होते हुये वह खुद महान् बन जाता है। ऋग्वेद का यह मन्त्र पूज्या बहिन जी के चरित्र को दर्शाता है कि पू० बहिन जी वेदोक्त चरित्र वाली थीं–

त्वमग्ने प्रथमो अंगिरा ऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा ।
तव व्रते कवयो विद्मनापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः ।।

(ऋ० १।३१।१।)

जो ईश्वर की आज्ञा का पालन, धर्म और विद्वानों के संग के सिवाय और कुछ काम नहीं करते हैं उनकी परमेश्वर के साथ मित्रता होती है फिर उस मित्रता से उनकी आत्मा में सत्-विद्या का प्रकाश होता है और वे विद्वान् होकर उत्तम काम का अनुष्ठान करके सब प्राणियों के सुख करने के लिये प्रसिद्ध होते हैं।

पूज्या आचार्या प्रज्ञा देवी जी की वाणी पठन-पाठन की प्रेरणा देनेहारी और उपदेश रूप ज्ञान का प्रकाश कर उस ज्ञान से दूसरों को प्रकाशित कर सत्य के पथ पर ले जाने वाली थी। उनकी वाणी सदा दूसरे की प्रशंसा करने वाली थी। यदि किसी में बुराइयाँ थीं तो उन बुराइयों को बखान करने के बजाय उस व्यक्ति की अच्छाइयों को उसके सामने कहकर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती थीं जैसे कि मैं (अरुणा) विद्यालय में तीन माह तक रही थी तब मुझसे कहा करती थीं कि अरुणा "तुम समझकर चुप रहती हो, यही तुम्हारी समझदारी है बेटे!"। ऋग्वेद का यह मन्त्र उनकी वाणी को दर्शाता है–

इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः ।
बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः ।।

(ऋ० १।१३।९।)

मनुष्यों को 'इडा' जो कि पठन-पाठन की प्रेरणा देनेहारी, 'सरस्वती' जो उपदेशरूप ज्ञान का प्रकाश करनेहारी 'मही' जो सब प्रकार से प्रशंसा करने योग्य है ये तीनों वाणी कुतर्क से खण्डन करने योग्य नहीं हैं तथा सब सुख के लिये तीनों प्रकार की वाणी सदैव स्वीकार करनी चाहिये, जिससे निश्छलता से अविद्या का नाश हो।

पूज्या आचार्या जी की वाणी अविद्या का नाश कर, विद्या की ओर ले जाने वाली थी।

पूज्या आचार्या प्रज्ञा देवी जी सदैव पुरुषार्थ में लगी रहती थीं। आलस्य को कभी भी अपने पास फटकने नहीं देती थीं। उनकी बुद्धि, धन, उत्तम सुख हम लोगों को बताता है कि पूज्या प्रज्ञा देवी जी पुरुषार्थी थीं। ऋग्वेद का यह मन्त्र उनके पुरुषार्थ को दर्शाता है–

एवा हि ते विभूतय ऊतय इन्द्र मावते ।
सद्यश्चित् सन्ति दाशुषे ।। (ऋ० १।८।९।)

जब मनुष्य पुरुषार्थी होकर सबका उपकार करने वाले और धार्मिक होते हैं तभी वे पूर्ण ऐश्वर्य और ईश्वर की यथायोग्य रक्षा आदि को प्राप्त होकर सर्वत्र सत्कार के योग्य होते हैं।

पूज्या आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी सदैव दूसरे को सुख देने की भावना रखती थीं। धन, बल, बुद्धि से यही कोशिश करती थीं कि दूसरे को सुख दे सकूँ।

जो व्यक्ति दूसरे को सुख देता है वह स्वयं सुखी होता है। ऋग्वेद का यह मन्त्र पू० आचार्या प्रज्ञा देवी के सुखी होने को दर्शाता है–

आ त्वा विशन्त्वाशवः सोमास इन्द्र गिर्वणः ।
शं ते सन्तु प्रचेतसे ।। (ऋ० १।५।७।)

ईश्वर ऐसे मनुष्यों को आशीर्वाद देता है कि जो मनुष्य विद्वान्

परोपकारी होकर अच्छी प्रकार नित्य उद्योग करके सब पदार्थों से उपकार ग्रहण करके सब प्राणियों को सुखयुक्त करता है, वही सदा सुख को प्राप्त होता है अन्य कोई नहीं।

पूज्या आचार्या जी वेदोक्त चरित्र वाली थीं इसको झुठलाया नहीं जा सकता। उनकी कार्यप्रणाली, वार्त्तालाप करने का ढंग, अच्छे संस्कार तथा उनके पुरुषार्थ को देखने से पता चलता है कि पू० आचार्या प्रज्ञा देवी जी एक वेदोक्त चरित्र वाली आर्यजगत् की विभूषित नारी थीं।

वेदोक्तमेव कुर्वाणो निः सङ्गोऽर्पितमीश्वरे।
नैष्कर्म्यां लभते सिद्धिं रोचनार्था फलश्रुतिः ।।

(भाग० पु० ११ स्कन्ध।३।४६)

फल की अभिलाषा छोड़कर और विश्वात्मा भगवान् को समर्पित कर जो वेदोक्त कर्म का ही अनुष्ठान करता है उसे कर्मों की निवृत्ति से प्राप्त होने वाली ज्ञानरूप सिद्धि मिल जाती है।

जो वेदों में स्वर्गादिरूप फल का वर्णन है, उसका तात्पर्य फल की सत्यता में नहीं, वह तो कर्मों में रुचि उत्पन्न कराने के लिये है।

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।

आर्यसमाज को मिला एक चमकता हीरा – डॉ० प्रज्ञा देवी जी

अविन्दद् दिवो निहितं गुहा निधिं वेर्न गर्भं
परिवीतमश्मन्यनन्ते अन्तरश्मनि ।
वज्रं वज्री गवामिव सिषासन्नङ्गिरस्तमः ।
अपावृणोदिष इन्द्रः परीवृता द्वार इषः परीवृताः ।।
(ऋ० १।१३०।३।)

जो योग के अंग धर्म, विद्या और सत्संग के अनुष्ठान से अपने आत्मा में स्थित परमात्मा को जानें वे, सूर्य जैसे अंधकार को दूर करता है, वैसे अपने संगियों की अविद्या छुड़ा, विद्या के प्रकाश को उत्पन्न कर सबको मोक्षमार्ग में प्रवृत्त कराके उन्हें आनन्दित कर सकते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों को संसार के सामने लाकर और आर्यसमाज की स्थापना करके लाखों लोगों के ऊपर उपकार किया है। सभी आर्य सज्जन ऋषि के उपकार को भुला नहीं सकते।

गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी ।
अष्टापदी नवपदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् ।।
(ऋ० १।१६४।४१।)

जो स्त्री समस्त वेदों को साङ्गोपाङ्ग पढ़कर पढ़ाती है वह सब मनुष्यों की उन्नति करती है।

आर्यसमाज को मिली, सौगात में पाणिनि कन्या महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी, जिन्होंने ऋषि दयानन्द के बताये रास्ते पर चलने के लिये कमर कस लिया। पू० डॉ० प्रज्ञा देवी जी के जीवन में जो भी कष्ट आये उनकी परवाह न करते हुए वह वैदिक संस्कार को जन–

जन तक पहुंचाने में जुटी रहीं। काशी में पाणिनि कन्या महाविद्यालय खोलकर वैदिक संस्कारों से लाखों लड़कियों के जीवन को संवार दिया। क्या उनकी त्याग और तपस्या आर्यसमाज को कभी भूलना चाहिये! जिस डॉ० प्रज्ञा देवी जी को आर्यसमाज सान्ताक्रुज बम्बई की स्वर्णजयंती पर श्रीमती लीलावती आर्य महाशय द्वारा ३०.१.१९९४ को प्रथम आर्य विदुषी महिला पुरस्कार से सुशोभित किया जा सकता है उसके लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली को इस बात पर विचार करना चाहिये कि पू० डॉ० प्रज्ञा देवी जी ने अपना मूल्यवान् जीवन आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में लगाया है उनकी पुण्यतिथि ६ दिसम्बर को "प्रज्ञा-दिवस" के रूप में मनाई जाये।

सचमुच आर्य समाज को मिला एक चमकता हीरा- स्व० डॉ० प्रज्ञा देवी जी ऐसे हीरे की चमक धूमिल न हो जाये इस बात पर आर्यसमाज को ध्यान देना चाहिये।

योो वां यज्ञैः शशमानो ह दाशति कविर्होता यजति मन्मसाधनः ।
उपाह तं गच्छथो वीथो अध्वरमच्छा गिरः सुमतिं गन्तमस्मयू ।।
(ऋ० १।१५१।७।)

जो इस संसार में सत्य विद्या की कामना करने वाले सबके लिये विद्यादान से उत्तम शीलपन का सम्पादन करते हुये सुख देते हैं वे सबके सत्कार के योग्य होते हैं।।

कई गुणों वाली गुरु माँ प्रज्ञा देवी जी

एक व्यक्ति में एक विशिष्ट गुण होना ही एक विशेषता है, लेकिन कई गुणों का समावेश एक ही व्यक्ति में होना भगवान् की असीम कृपा है। मैंने अपने अनुभव से जो उनका रूप देखा है- उनमें से कुछ इसप्रकार है-

१. दुःख में भी उनका मन और बुद्धि का विचलित न होना।

२. अपने ज्ञान को सही जगह इस्तेमाल करना।

३. सांसारिक व्यवहार निभाते हुये भी अपने मन को संसार से बचाते रहना।

४. जो मनुष्य जैसा है उसके साथ वैसा ही व्यवहार करके उसको खुश रखना।

५. अपने कोमल स्वभाव को नहीं छोड़ना।

६. अपने स्वभाव को ऐसा सुन्दर बनाकर रखना कि दुर्जन व्यक्ति भी अपने स्वभाव को बदल दे।

तमुष्टीहीन्द्रं यो ह सत्वा यः शूरो मघवा यो रथेष्ठाः ।
प्रतीचश्चिद् योधीयान् वृषण्वान् ववव्रुषश्चित्तमसो विहन्ता ।।
(ऋ० १।१७३।५।)

मनुष्यों को चाहिये कि उसी की स्तुति करें जो प्रशंसित कर्म करे और उसी की निन्दा करें जो निन्दित कर्मों का आचरण करे। सत्य कहना ही स्तुति है और किसी के विषय में झूठ बोलना ही निन्दा है।।

✡

प्रथम आर्य विदुषी महिला–

आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी

**युवां पूषेवाश्विना पुरंधिरग्निमुषां न जंरते हविष्मान् ।
हुवे यद् वां वरिवस्या गृणानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ।।**

(ऋ० १।१८१।९।)

जैसे सूर्य सबकी पुष्टि करने वाला, अग्नि और प्रभात समय को प्रकट करता, वैसे प्रशंसित दानशील पुरुष विद्वानों के गुणों को अच्छे प्रकार कहता है।

महान् माँ की महान् बेटी, महान् देश की महान् बेटी, महान् संस्था की महान् प्रचारिका आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी अपने छात्र काल में सभी सुख दुःख को सहते हुए विद्या अध्ययन में डटी रहीं। गुरु जी ने जो भी आज्ञा दी उसे आशीर्वाद मानकर पूर्ण किया, कभी कष्टों से विचलित नहीं हुईं। विद्या अध्ययन पूर्ण करके जब आचार्या पद में आयीं तब पूर्णरूप से शिक्षिका बन चुकी थीं। उनका एक ही सपना था कि किसी तरह गुरुकुल बने और मेरे भारत देश की बेटियाँ यहाँ से वैदिक संस्कारों से सुसज्जित होकर निकलें।

**अमन्दन्मा मरुतः स्तोमो अत्र यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र ।
इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यं सख्ये सखायस्तन्वे तनूभिः ।।**

(ऋ० १।१६५।११।)

विद्वान् जन जैसे पढ़े और शब्दार्थ सम्बन्ध से जाने हुए वेद पढ़ने वाले के आत्मा को सुख देते हैं वैसे ही औरों को भी सुखी करेंगे, ऐसा मानकर वे अध्यापक शिष्य को पढ़ावें जैसे आप ब्रह्मचर्य से रोगरहित बलवान् होकर दीर्घजीवी हों वैसे औरों को भी करें।

पू० आचार्या प्रज्ञा देवी जी ने इस काम को भी पूर्ण किया। आचार्या के पद में रहकर लोकव्यवहार को निभाते हुये भी योग के मार्ग को कभी नहीं छोड़ा क्योंकि योग ही ऐसा कर्म है जो मनुष्य के जीवन को आगे बढ़ाता है। उस महान् माँ (श्रीमती हरदेवी आर्या) ने अपने बच्चों को धन-दौलत के शृंगार से नहीं सजाया था बल्कि वैदिक संस्कारों से सुसज्जित किया था ताकि मेरे बच्चों का भारतदेश के महान् लोगों में नाम हो।

आज भी हिमालय गवाह है, जिन महान् सपूतों को उसने अपनी शरण में रखा। जिस देश ने ऋषि दयानन्द जैसे महान् व्यक्ति को जन्मा, ऐसा महान् ऋषि, जिसने स्वतंत्रता का शंखनाद बजाया और महान् वीरों को जिसने स्वतंत्रता का पाठ पढ़ाया, ऐसे महान् ऋषि के महान् भारत देश में जन्म लिया था डॉ० प्रज्ञा देवी जी ने।

महान् गुरु पूजनीय ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी महाराज के शरण में रहकर अपने जीवन को वैदिक संस्कारों से सुशोभित किया और अपने गुरु के दिये ज्ञान को शिरोधार्य मानकर अपने जीवन में उस ज्ञान को कर्मरूप में वे ढालती चली गईं।

इत्थं विधान्यनेकानि वसतां गुरुवेश्मसु ।
गुरोरनुग्रहेणैव पुमान् पूर्णः प्रशान्तये ।।
(भागवत पुराण १० स्कन्ध। अध्याय ८०। श्लोक ४३)

जिस समय हम लोग गुरुकुल में निवास कर रहे थे, हमारे जीवन में ऐसी-ऐसी अनेक घटनायें घटित हुई थीं। इसमें सन्देह नहीं कि गुरुदेव की कृपा से ही मनुष्य शान्ति का अधिकारी होता है और पूर्णता को प्राप्त करता है।

गुरु के दिये ज्ञान को धारण करना गुरु के समीप रहने को कहते हैं,

गुरु की सच्ची पूजा यही है। गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य मानकर और ऋषियों के लिखे सद्ग्रन्थों को पढ़कर अपने जीवन को धर्म के पथ पर चलकर ऊंचा उठाया था तथा अपने जीवन को त्याग-तपस्या की भट्ठी में तपाया था पू० बहिन जी ने। आज उनकी इसी त्याग तपस्या का फल था कि आर्यसमाज सान्ताक्रुज बम्बई के स्वर्ण जयंती पर श्रीमती लीलावती आर्य महाशय द्वारा ३०.१.१९९४ को प्रथम आर्य विदुषी महिला पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

श्वकार्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्ने चापराह्निकम् ।
न हि प्रतीक्षते मृत्युः कृतमस्य न वा कृतम् ।।

"कल का काम आज और आज काम प्रातः ही कर डालो, क्योंकि मृत्यु किसी की प्रतीक्षा नहीं करती कि इसने काम पूरा कर लिया है या नहीं।"

आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई से प्राप्त अभिनन्दन पत्र की अविकल प्रस्तुति–

ओ३म्

श्रीमती लीलावती महाशया प्रथम आर्य विदुषी महिला पुरस्कार

आर्य समाज सान्ताक्रुज के स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर पाणिनि कन्या महाविद्यालय की संस्थापिका आचार्या विदुषी डॉ० प्रज्ञा देवी एम० ए०, पी–एच० डी० की सेवा में दि० ३०.१.१९९४ को सादर समर्पित

अभिनन्दन–पत्र

सम्माननीया आचार्या जी!

आपका जन्म महर्षि दयानन्द सरस्वती के परम भक्त, वैदिकधर्म में अपूर्व निष्ठावान् माननीय अध्यापक श्री कमलाप्रसाद आर्य एवं पूज्या माता हरदेवी जी के धर्मपरायण परिवार में हुआ। आपके पूज्य पिता जी की हार्दिक अभिलाषा थी कि वे अपने समस्त बच्चों को स्कूल की शिक्षा के साथ आर्ष प्रणाली से भी शिक्षित करें। किन्तु प्रभु के खेल न्यारे हैं। पिता जी की इच्छा पूर्ण नहीं हुई और वे संसार से बिदा हो गये। आपकी माता जी ने यह कार्य पूरा करने का संकल्प लेकर दृढ़ निश्चय, तप और त्याग का परिचय दिया।

आदर्श शिष्या–

परमपिता की असीम कृपा से आदर्श आचार्य पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी महाराज के चरणों में बैठकर आपने अपने तप, त्याग, धैर्य और दृढ़ निश्चय के बल पर गुरुवर से वेद–वेदाङ्ग–उपाङ्ग एवं वैदिक सिद्धान्तों के गूढ़ रहस्यों को जानने का प्रयास किया। मान्यवर जिज्ञासु जी

ने आपको न केवल शास्त्रीय शिक्षा से अलंकृत किया अपितु आचार-व्यवहार और व्यावहारिक कार्य कुशलता की शिक्षा में भी निपुणता प्राप्त कराई। इस प्रकार आप अपने पुरुषार्थ से गुरुवर के आशीर्वाद की परम अधिकारिणी बनीं। अपने पूज्य गुरु के चरणों में रहकर आपने निरन्तर सत् शास्त्रों का अध्ययन किया और प्रत्येक परीक्षा में अग्रणी रहीं। व्याकरणाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् व्याकरण की मूर्धन्य वृत्ति (काशिका) के ऊपर उच्च कोटि का शोध प्रबन्ध लिखा जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से आपको विद्यावारिधि (पी-एच.डी.) की उपाधि से सम्मानित किया गया।

दृढ़ प्रतिज्ञ–

आपने संकल्प किया था कि अपने पूज्य पिता तथा गुरुवर की आकांक्षाओं को पूर्ण करूँगी। उसी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये आपने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये संस्कृत के गढ़ वाराणसी जैसे ऐतिहासिक नगर में पाणिनि कन्या महाविद्यालय की स्थापना की और आने वाली पीढ़ी को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा उद्घोषित आर्ष पाठविधि से शिक्षा देना आरम्भ किया। आज आपके द्वारा आरोपित पौधा विशाल वृक्ष का रूप धारण करके चारों ओर के वातावरण को सुरभित कर रहा है। यह कन्या महाविद्यालय आपके परम पुरुषार्थ का ही परिचायक है जिससे हम कह सकते हैं कि आप ऐसी दृढ़वती नारी हैं जिसका शिक्षा के क्षेत्र में और प्रमाण मिलना बहुत कठिन है।

वैदिक धर्म की विशिष्ट प्रचारिका–

आपने ऋषि दयानन्द और वैदिक वाङ्मय के सन्देश को घर-घर तक पहुँचाने के लिये सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया। आप आर्यसमाजों के प्रायः सभी उत्सवों सम्मेलनों, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों में

अपनी छात्राओं के साथ यज्ञ कर्मों को सम्पूर्ण कराने में अपना पूरा–पूरा योगदान देती हैं। वेद ज्योति को जगमगाने का जो संकल्प आपने लिया है वह असाधारण और अतुलनीय है। हमें प्रसन्नता है कि आपके द्वारा किये कार्यों के आगे न केवल आर्य समाज अपितु काशी नगरी के समस्त विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय भी नतमस्तक हैं। तभी तो आपके द्वारा स्थापित संचालित कन्या महाविद्यालय अनुकरणीय और स्मरणीय बन गया है। आपकी योग्यता, निष्ठा आदि विशेष गुणों के साथ ऋषि दयानन्द के प्रति दृढ़ आस्था को देखते हुये हमारा मस्तक अनायास ही श्रद्धावनत हो जाता है। आज हमें प्रसन्नता है कि हम आपको श्रीमती लीलावती महाशय प्रथम आर्य विदुषी महिला पुरस्कार से सम्मानित कर गौरवान्वित हो रहे हैं। हम आपके दीर्घ जीवन की कामना करते हुये परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि आप ऋषि के कार्य को आगे बढ़ाते हुये सदा सफलता की ओर अग्रसर होवें।

हम हैं आपके प्रति श्रद्धावनत

स्वामी मेधानन्द (प्रधान)   विमलस्वरूप सूद (उपप्रधान)   आर०के०सहगल (उपप्रधान)   विश्वभूषण आर्य (महामन्त्री)

संगीत शर्मा (मन्त्री)   मदन रहेजा (मन्त्री)   पुरुषोत्तम अग्रवाल (कोषाध्यक्ष)

सदस्य–देवेन्द्रकुमार कपूर, चन्द्रगुप्त आर्य, यशपाल अग्रवाल, प्रकाशचन्द्र शास्त्री, एस० के० त्रेहन, डॉ० मणीन्द्रकुमार व्यास, कमलेश सूद, सन्तोष सेठ।

यद्ध त्यन्मित्रावरुणावृतादध्याददाथे अनृतं स्वेन
मन्युना दक्षस्य स्वेन मन्युना ।
युवोरित्थाधि सद्मस्वपश्याम हिरण्ययम् ।
धीभिश्चन मनसा स्वेभिरक्षभिः सोमस्य स्वेभिरक्षभिः ।।

(ऋ० १।१३९।२।)

मनुष्य को सत्य ग्रहण और असत्य का त्याग कर अपने पुरुषार्थ से पूरा बल और ऐश्वर्य सिद्धकर अपना अन्तःकरण और अपने इन्द्रियों को सत्य काम में प्रवृत्त करना चाहिये।

सत्य यम का एक अंग माना गया है।

नारी जब बच्चे को जन्म देती है तो जननी कहलाती है। बच्चे में अच्छे संस्कार पैदा करती है तो निर्मात्री कहलाती है। बच्चे के दुर्गुणों का नाश करती है तो दुर्गा कहलाती है। बच्चे को विद्याप्राप्ति कराती है तो उस वक्त एक शिक्षिका कहलाती है और यही सत्य है।

पू० आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी ने ईश्वर के चिन्तन में, ध्यान में, भजन में अपने जीवन को लगाया यही सत्य है।

पूज्या आचार्या जी ऐसी विदुषी थीं जिसके आचरण से विद्वत्ता झलकती थी। पूज्या आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी अपने प्रति दूसरे के हृदय में श्रद्धा पैदा कर देती थीं। सत्य बोलना, सत्य बर्ताव करना आपके स्वभाव में अलग ही झलकता था।

सत्य परमात्मा है और परमात्मा की वाणी वेद है इसीलिए ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज के नियम में लिखा है कि 'वेद सब सत्य

विद्याओं का पुस्तक है। जो वेद के अनुसार अपने जीवन को बना लेता है वह भगवान् जैसा हो जाता है। भगवान् में ६ गुण होते हैं– ऐश्वर्य, धन, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य। पूज्या आचार्या जी में ये ६ गुण विद्यमान थे इसीलिये मैं उन्हें भगवान् मानती हूँ क्योंकि पू० बहिन सत्य की मूर्त्ति थीं।
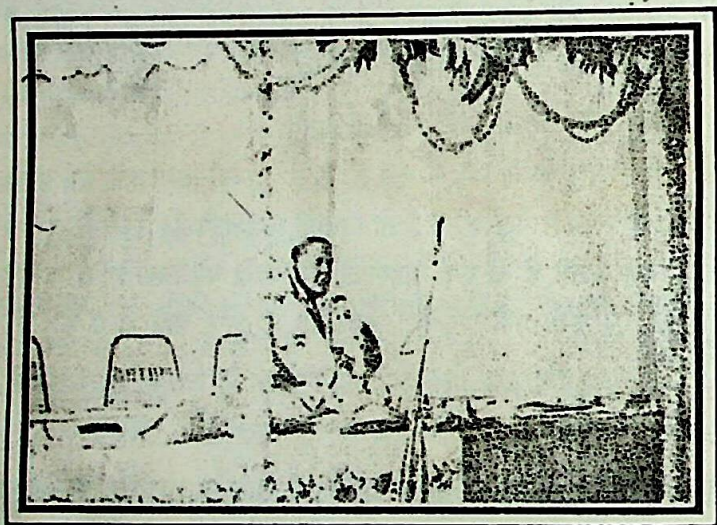
वार्षिकोत्सव के मंच पर विराजमान
पूजनीया बहिन जी

स्वर्ग सा सुन्दर पाणिनि कन्या महाविद्यालय

पाणिनि कन्या महाविद्यालय स्वर्ग जैसा सुन्दर! स्वर्ग जैसा क्यों? इसलिए कि वहां की नींव में ऐसे संस्कार डाले जाते हैं।

पूज्या आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी ने संस्कार पर ज्यादा ध्यान दिया। चित्त ही इस शरीर में ऐसा खाना है जो मनुष्य के हर जन्मों के संस्कारों को इकट्ठा रखता है फिर अपने पास के संस्कार को उठाकर अहंकार को देता है। अहंकार उठाकर बुद्धि को देता है। बुद्धि पदार्थ के यथार्थस्वरूप को जानकर निर्णय करके मन को देती है। मन इन्द्रियों को देता है और इन्हीं इन्द्रियों से मनुष्य कर्म करता है– अच्छा या बुरा। अच्छे संस्कार इन्द्रियों की चंचलता को समाप्त कर देते हैं। गुरुकुल में ऐसी सभी बातों का ध्यान दिया जाता है ताकि ब्रह्मचारिणियां अच्छे संस्कारों से सुदृढ़ बन सकें और सत्य के पथ पर आगे बढ़ जायें और अपनी मंजिल को प्राप्त कर लें जिसके लिये यह मानव जन्म मिला है। इस विद्यालय में संस्कारों की नींव डालने वाली गुरुमाता आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी एवं (जिनका ६ दिसम्बर १९९५ में निधन हो गया)। गुरुमाता आचांर्या मेधा देवी जी की त्याग-तपस्या का फल है कि यहां की हवाओं में, यहां की मिट्टी में संस्कार ऐसे घुल गये हैं कि यहां कम से कम पढ़ी लिखी लड़कियां भी, चाहे वो कम उम्र की हों चाहे ज्यादा उम्र वाली, यहां से कुछ प्राप्त करके ही जाती हैं।

यहां दो नदियों का संगम है एक गंगा आचार्या डॉ० प्रज्ञा देवी जी और दूसरी यमुना आचार्या मेधा देवी जी, जिनके अच्छे संस्कारों की धारा से स्नान कर और उनके चरण रज को यहां की आत्मायें अपने मस्तक में लगा कर पवित्र होती हैं।

महोपनिषद् में मोक्ष के चार द्वारपालों का वर्णन है–

मोक्षद्वारे द्वारपालाश्चत्वारः परिकीर्तिताः ।
शमो विचारः सन्तोषश्चतुर्थः साधुसंगमः ।।
(अ० ४। मं० २१)

मोक्ष का चौथा द्वारपाल है साधुसंग। किसी महापुरुष का कथन है–

साधूनां दर्शनं पुण्यं, तीर्थभूतानि साधवः ।
तीर्थः फलति कालेन, सद्यः साधुसमागमः ।।

आत्मवित् ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का दर्शन अत्यन्त दुर्लभ है, पुण्य से ही ऐसा दर्शन प्राप्त होता है। महापुरुषों का दर्शन तीर्थ समान है। ये तीर्थ रूप होते हैं। इनके सत्संग, उपदेश, सेवा, दर्शन, सहवास, आशीर्वाद, दया विशेष से जन्म-जन्मान्तरों के बंधन से मनुष्य मुक्त हो जाता है।

'पाणिनि कन्या महाविद्यालय' की दोनों मातायें प्रज्ञा देवी जी एवं मेधा देवी जी के हृदय से निकली ममता, स्नेह, वात्सल्य से इस बगीचे के हर फूल में आकर्षण है चाहे वह ज्ञान का क्षेत्र हो, संगीत का क्षेत्र हो, चाहे तर्क क्षेत्र हो।

गुरुमाता डॉ० प्रज्ञा देवी जी के स्वर्ग सिधारने के बाद गुरुमाता आचार्या मेधा देवी जी विद्यालय के कार्य को संभालने में तत्पर हैं। बड़ी बहिन डॉ० प्रज्ञा देवी जी का आशीर्वाद आज भी छोटी बहिन आचार्या मेधा देवी जी को मिलता रहता है। इस विद्यालय के अन्य कार्य को संभालने के लिये पू० मेधा देवी जी की सैनिक 'सुश्री नन्दिता शास्त्री एवं सुश्री सूर्या देवी जी हैं, इनका जीवन त्याग-तपस्या को लिये हुये है और वे इस विद्यालय को सर्वदा समर्पित हैं संलग्न हैं।

यहाँ लड़कियाँ अच्छे नम्बरों से पास होती हैं। हर कार्य में दक्षता प्राप्त

करती हैं। इस विद्यालय में सुन्दर यज्ञशाला-अतिथिशाला और कई कक्ष हैं– किसलय, कार्यालय (बाहर से आये हुए लोगों को इन कक्षों में बिठाया जाता है)। संगीतकक्ष- (यहाँ ब्रह्मचारिणियों को तबला, ढोलक, सितार, हारमोनियम, संगीत आदि सिखाया जाता है।)

शस्त्रशाला–धनुर्विद्या, लाठी, तलवार, भाले आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है।

पाठशाला–यहाँ विद्यार्थिनी बालिकाओं को बड़ी गुरुता से व्याकरण वेद–दर्शनादि पढ़ाया जाता है, जिसकी धाक सर्वत्र मानी जाती है।

रसवती–यहाँ सभी प्रकार के पकवान बनाये जाते हैं।

गोशाला–यहाँ अच्छी–अच्छी गौओं को रखा जाता है और उनके स्वास्थ्य पर ध्यान दिया जाता है।

साधना कुटीर–यहाँ जिस साधिका को साधना करना होता है वह इस कक्ष में ध्यान, आसनादि करती हैं।

छात्रावास–यहाँ सभी छात्रायें निवास करती हैं।

परिचयप्रदा–पूजनीया बहिन जी का विशाल तैलचित्र तथा उनका जीवन–दर्पण छायाचित्रों से प्रदर्शित है।

विद्यालय की खाली भूमि में साग–सब्जी बोयी जाती है। पाणिनि कन्या महाविद्यालय साफ–सफाई लिये हुये है यहाँ की लड़कियाँ पढ़ाई के साथ–साथ गुरुसेवा में भी तत्पर रहती हैं। यहाँ पुस्तकालय है जहाँ हर ग्रन्थों का संग्रह है जिनका अध्ययन छात्रायें करती हैं। लड़कियों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है। यह विद्यालय दोनों माताओं की त्याग–तपस्या का फल है कि यहां की नींव अच्छे संस्कारों से डाली गई है और यही कारण है कि इस विद्यालय का नाम सभी गुरुकुलों में प्रथम स्थान पर है। प्रभु के आशीर्वाद और आप सभी आर्य सज्जनों के आशीर्वाद से यह विद्यालय फल–फूल रहा है और अपना गौरव बनाये रखा है।

स्वर्ग सा सुन्दर यह विद्यालय भारत की कन्याओं को अच्छे संस्कारों सें सुसज्जित करने के लिये आसमान के नीचे आप सभी के आशीर्वाद की इन्तजार करते हुये खड़ा है।
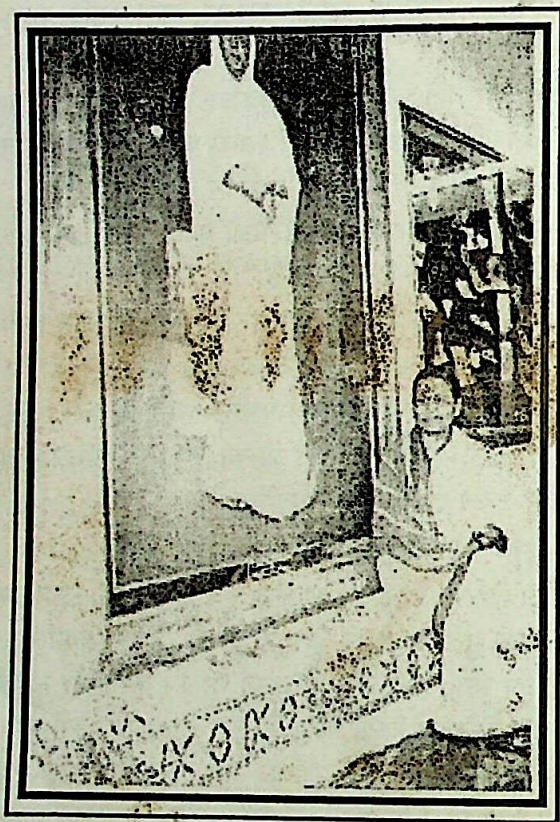
पूजनीया बहिन जी के छायाचित्र के नीचे
भावविह्वल बैठी अनुजा मेधा देवी

शब्दाञ्जलि - समर्पिका

अरुणा आर्या
खरोरा, रामपुर
(छत्तीसगढ़)